NEERAJ KUMAR
D-117, HOSTEL 4,
I.I.T.,
KANPUR 208016

देश हमारा बने महान

एक हिन्दुस्तानी इंजीनियर द्वारा संचालित

गर्ग गैस सर्विस
एच० पी० गैस वितरक
१२३/३६२, फजलगंज, कानपुर
फोन : २२४२०६

रजिस्ट्रेशन सं० 35703/79

(युग-भारती द्वारा प्रकाशित)

पोस्टल IR/KP City/0845/96

वर्ष : १७ ★ अंक : ६ कानपुर, १ मई, १९९६ ☐सदस्यता शुल्क : द्विवार्षिक केवल ६० रुपया (पोस्टल चार्ज सहित)

विचार ही नहीं, प्रचार और कार्यान्वयन भी !

(प्रज्ञा भारती, कानपुर की गतिविधियों की संक्षिप्त जानकारी)

सुनील मिश्र

गहन शोध की आवश्यकता

दिनांक १४ फरवरी को 'केशव भवन' (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ कार्यालय) में प्रज्ञा भारती के सदस्यों की एक बैठक 'राष्ट्रधर्म' के पूर्व सम्पादक व संघ के क्षेत्रीय प्रचार प्रमुख माननीय वीरेश्वर द्विवेदी के साथ हुई। सर्वप्रथम श्री राजेश्वर प्रसाद अवस्थी ने अपने बंगलौर प्रवास के संस्मरण बताते हुए डॉ० उपेन्द्र शिनॉय तथा प्रज्ञा भारती, बंगलौर की उपलब्धियों की चर्चा की। मा. वीरेश्वर जी ने भी अपने विद्यार्थी जीवन के बंगलौर प्रवास के बारे में बताते हुए रेखांकित किया कि किस प्रकार ईसाई लोग अपने मत के विकास की दिशा में गंभीर उच्चस्तरीय शोधकार्य को सर्वथा अपरिहार्य मानते हैं तथा इस प्रकार के अनेक केन्द्रों का संचालन करते हैं जहाँ शोध हेतु उपयुक्त वातावरण तथा सभी सुविधाएं उपलब्ध हों।

यदि हम वास्तव में भारतीय संस्कृति तथा हिन्दुत्व का उत्थान चाहते हैं तो इस प्रकार के शोध तथा शोधकेन्द्रों के बिना कुछ नहीं हो सकता और इसमें बुद्धजीवियों को ही शीर्ष भूमिका निभानी होगी। इसलिए प्रज्ञा भारती को चाहिये कि चर्चा के विषयों की संख्या बढ़ाने के लोभ में न पड़कर वे गिने-चुने विषय लें तथा उन पर चिंतन-मनन-शोध कर ऐसी सामग्री तैयार करें जिसका जन सामान्य में प्रचारार्थ उपयोग किया जा सके तथा जिसकी सहायता से अपनी सनातन संस्कृति के विरुद्ध दिन-रात किये जा रहे दुष्प्रचार का प्रतिकार किया जा सके। इस संदर्भ में प्रज्ञा भारती कानपुर ने दो विषयों - 'कश्मीर समस्या' तथा 'दैनिक जीवन में अंग्रेजी भाषा की अनुचित घुसपैठ' पर उपयोगी सामग्री तैयार करने की जिम्मेदारी स्वीकार की।

१८ फरवरी को श्री लाडली प्रसाद गुप्त के निवास पर आयोजित बैठक में कश्मीर-समस्या पर प्रचारार्थ पुस्तिका-निर्माण हेतु उपसमिति का गठन किया गया - आई.आई.टी. के प्रोफेसर ए.के. रैना, पनुन कश्मीर के क्षेत्रीय संयोजक श्री प्राणेश नागरी तथा आई.आई.टी. में शोधरत श्री नीरज कुमार। पुस्तिका में जिन कुछ पक्षों पर विशेष बल दिया जायेगा, वे हैं - भौगोलिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक सभी रूपों में कश्मीर अनादिकाल से भारत का अटूट अंग रहा है; कश्मीर-समस्या की उत्पत्ति तथा वृद्धि का ऐतिहासिक विवेचन ; साथ ही इसका समाधान और उसमें जन सामान्य का संभव योगदान।

नव संवत्सर के प्रसंग में श्री ओमशंकर ने इस विडम्बना की ओर सबका ध्यान आकर्षित किया कि सरकार शकों के भारत पुनरागमन के उपलक्ष्य में प्रचलित शक संवत् का प्रयोग तो करती है, पर उनसे भारत की रक्षा करने वाले सम्राट विक्रमादित्य द्वारा स्थापित विक्रमी संवत् का नहीं। शकारि विक्रमादित्य के जीवन पर अधिकृत जानकारी एकत्र करने का दायित्व श्री ओमशंकर तथा श्री जागेश्वर प्रसाद ने स्वीकार किया।

श्री सुनील मिश्र ने प्रज्ञा भारती के शोध प्रकोष्ठ की स्थापना हेतु प्रथम चरण-पुस्तकालय की स्थापना के शीघ्र कार्यान्वयन हेतु सदस्यों से सहयोग का आग्रह किया। श्री जागेश्वर प्रसाद ने सुझाव दिया कि सभी के लिए प्रत्येक उपयोगी पुस्तक क्रय करना या पढ़ना संभव नहीं, अतः कई दलों में बँटकर सदस्य एक-एक पुस्तक खरीदकर उस पर अध्ययन, चर्चा करें और उसका सार सभी के समक्ष प्रस्तुत करें तो कम समय में ही सबको अभीष्ट जानकारी उपलब्ध हो सकेगी तथा लेखन का अभ्यास भी बढ़ेगा।

हिन्दू धर्म को अन्य संप्रदायों के समकक्ष मानने के सरकारी दुराग्रह तथा विभिन्न पंथों द्वारा राजनीतिक लाभ हेतु अपने आपको हिन्दुत्व से अलग एक स्वतंत्र पंथ सिद्ध करने की बढ़ती दुष्प्रवृत्ति पर कई सदस्यों ने चिंता व्यक्त की। भारत में उद्भूत अनेकानेक पंथ वास्तव में एकात्म हैं व हिन्दुत्व से ही प्रेरित तथा अनुप्राणित हैं - इस तथ्य को तर्कपूर्ण, प्रभावी ढंग से संविधान, मीडिया तथा जनसामान्य के समक्ष प्रस्तुत करने की आवश्यकता सभी ने अनुभव की। तदनुसार आगामी बैठक का विषय निर्धारित किया गया - 'भारतीय पंथों की एकात्मता व एकसूत्रता'।

नवीन कार्यसमिति

अन्त में वर्ष १९९६ तथा १९९७ हेतु सर्वसम्मति से निम्नांकित कार्यसमिति का गठन सम्पन्न हुआ :

अध्यक्ष : श्री ओमशंकर त्रिपाठी, प्राचार्य, पं. दीनदयाल विद्यालय।

उपाध्यक्ष : श्री हरदत्त दुबे, पूर्व प्रशासनिक अधिकारी।

उपाध्यक्ष : श्री गोपाल कृष्ण पाण्डेय, अधिष्ठाता, विधि संकाय, कानपुर विश्वविद्यालय।

मंत्री : श्री राजेश्वर प्रसाद अवस्थी, जिला सम्पर्क प्रमुख, नगर संघचालक, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, कानपुर।

सहमंत्री : श्री गंगाप्रसाद त्रिपाठी, पूर्व अधिकारी, जीवन बीमा निगम।

सहमंत्री : श्री शंकरदयाल मिश्र, पूर्व जोनल श्रमिक शिक्षा निदेशक।

कोषाध्यक्ष : श्री लाडली प्रसाद गुप्त, उद्योगपति (एलुमिनियम)

संगठन मंत्री : श्री सुनील कुमार मिश्र, प्रवक्ता, रसायन विज्ञान, दयानन्द महाविद्यालय

प्रचार मंत्री : श्री नीरज कुमार, शोध छात्र आई.आई.टी.

सदस्य : श्री पातीराम भट्ट, पूर्व प्राचार्य, राम कृष्णमिशन विद्यालय।

सदस्य : श्री जागेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव, पूर्व प्रवक्ता, बी.एन.एस.डी. विद्यालय

सदस्य : श्री यतीन्द्र तिवारी, प्राचार्य, अर्मापुर महाविद्यालय।

भारतीय पंथों की एकसूत्रता

१७ मार्च को श्री मूलचन्द्र अग्रवाल (पूर्व जिला एवं सत्र न्यायाधीश) के निवास पर आयोजित बैठक में 'भारतीय पंथों की एकात्मता' विषय पर चर्चा का प्रारम्भ करते हुए श्री ओमशंकर ने सवाल उठाया कि इस एकात्मता के बारे में भ्रम या कुप्रचार हुआ ही क्यों? इसलिए कि इससे संबंधित चर्चा के पारम्परिक स्थानों और अवसरों यथा कुम्भ, मेले, यज्ञ, कथा इत्यादि में चर्चाओं का होना बन्द हो गया। तभी ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई कि जिस जड़ तथा तने से सबको प्राण रस मिलता है, उस हिन्दुत्व को उपेक्षित कर प्रत्येक पंथ रूपी टहनी को स्वतंत्र वृक्ष माना जाने लगा। भारत में पंथ बहुत समय से हैं, मतवाद भी है, पर तत्संबंधित विवादों का सहज ही हल होता रहता था। लेकिन जब से राजनीति ने दखल किया तब से प्रयास हल का नहीं, वैमनस्य बढ़ाने का ही हो रहा है।

श्री सोमनाथ शुक्ल (सदस्य, कानपुर विश्वविद्यालय कार्य परिषद) के अनुसार इस्लाम व ईसाइयत को भारतीय पंथ न मानने का उनके भारत में प्रादुर्भूत न होने के अतिरिक्त दूसरा कारण यह भी है कि उनमें सहिष्णुता, सह-अस्तित्व या विचार स्वातंत्र्य का अभाव है। वे अहिंसा और प्रेम की बात तो करते हैं, उस पर आचरण नहीं। भारतीय पंथों में सदा से ही उदात्त जीवन मूल्यों सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह आदि के व्यवहार पर आग्रह रहा। 'महाजनो येन गतः स पन्थः' की भावना से विभिन्न पंथों का आविर्भाव हुआ। सभी पंथों में स्वयं को श्रेष्ठतम गिनने की सहज प्रवृत्ति पाई जाती है। परन्तु सभी के लिए यह माननीय व स्मरणीय है कि व्यक्ति आधारित पंथों की तत्व आधारित धर्म - हिन्दू धर्म - से कोई प्रतिस्पर्धा न हो सकती है, न होनी चाहिए। इसलिए जब हम 'सेकुलर' का अनुवाद 'पंथ निरपेक्ष' न कर 'धर्म निरपेक्ष' करते हैं तो अपने विनाश का मार्ग स्वयं प्रशस्त कर लेते हैं।

बैठक के विषय को इतिहास तथा दर्शन दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण बताते हुए श्री यतीन्द्र तिवारी ने भारत की इस विशेषता पर प्रकाश डाला कि चूंकि यहाँ सहिष्णुता है, इसीलिए पंथों की प्रचुरता है। उनकी राय में प्रत्येक पंथ का जन्म तत्कालीन सामाजिक विकृतियों के विरोध में हुआ। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जब-जब कोई भी पंथ मानवीय मूल्यों त्याग, समर्पण, सेवा से विचलित हुआ या राजसत्ता के चक्कर में पड़ा, तब-तब वह अप्रासंगिक हुआ और उसका पतन प्रारम्भ हो गया। आज के विषैले सामाजिक वातावरण के पीछे भी यही दो कारण देखे जा सकते हैं।

पंथ, मत या संप्रदाय को हर भूभाग या मानव-समूह की सहज आवश्यकता बताते हुए श्री जागेश्वर प्रसाद ने कहा कि विचारधारा कोई भी हो, कालान्तर में उसमें पंथीय प्रवृत्ति आ ही जाती है। उनके अनुसार भारतीय संस्कृति में कुछ विशेष शुभ लक्षण हैं जो प्रत्येक भारतीय पंथ में विद्यमान हैं, यथा :

- 'एकं सद् विप्राः बहुधा वदन्ति' अर्थात् हमारा ही नहीं, तुम्हारा मार्ग भी ठीक है। Exclusive होने का आग्रह नहीं।

(शेष पेज ४ पर)

प्रसंगवश

सुधार का एकमेव उपाय - शिक्षा

वर्तमान में भारत की या सम्पूर्ण विश्व की सबसे बड़ी समस्या अथवा वर्तमान दुर्दशा का मूलभूत कारण पूछे जाने पर भाँति-भाँति के उत्तर सामने आते हैं। वैज्ञानिक और अर्थशास्त्री बढ़ती जनसंख्या, साधनों की कमी या तकनीकी विकास की धीमी गति और यहाँ तक कि पिछड़े देशों के नागरिकों के आलस्य और कमअक्ली को गिनाते हैं। दार्शनिक और विचारक उँगली रखते हैं मनुष्य-मनुष्य में असमानता पर, अविकसित देशों की रूढ़िवादिता पर और किसी शासन प्रणाली विशेष या विचारधारा विशेष पर। परन्तु विश्व भर में बढ़ते असंतोष और संघर्ष का मूल कारण है मनुष्य का चरित्र। यहाँ 'चरित्र' से तात्पर्य मात्र लंगोट का कच्चा या पक्का होना नहीं वरन् सम्पूर्ण मानसिकता है जो कि उसके विचार और व्यवहार को प्रभावित करती है।

भारत में प्रारम्भ से ही मानव-चरित्र को उसके समस्त पक्षों के साथ समग्रता में देखा-परखा और विश्लेषित किया गया। इतना ही नहीं, बल्कि अनुकरण हेतु समय-समय पर चरित्र का आदर्शतम रूप भी प्रस्तुत किया गया। भारत में व्यक्ति और समाज की आस्थाएं धन, साधन, सुविधा, शक्ति या राजसत्ता पर नहीं वरन् संतोष पर, परोपकार पर, त्याग पर और भौतिकता से आगे आध्यात्मिकता पर आधारित थीं। इनसे स्वयं भारत और भारतवासी तो संतुष्ट और प्रसन्न थे ही, सम्पूर्ण विश्व पर भी इस उदात्त चिंतन का प्रभाव था।

किंतु सृष्टि का चक्र! भारत का चिंतन भी भ्रमित होने लगा। हर चीज को भौतिकता के चश्मे से खंड-खंड कर जाँचा जाने लगा। स्वतंत्रता के बाद तो यह प्रक्रिया इतनी तीव्र हुई कि सारे प्रयास 'More American than thou' बनने पर ही केन्द्रित हो गये। इसका मुख्य कारण यह था कि उस समय, और उसके बाद भी, हमारे देश की बागडोर सँभालने वाले अधिकांश नेता पश्चिम में ही शिक्षित और पश्चिम की ही भौतिकवादी विचारधाराओं से अभिभूत थे, चाहे वह बड़े पैमाने पर केन्द्रीकृत औद्योगिक प्रगति हो, चाहे मानव को आर्थिक प्राणी मानने वाला साम्यवाद हो, चाहे इनक या अन्य दर्शनों का अबूझ सा घालमेल हो। और इस संपूर्ण प्रक्रिया में जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण वस्तु सर्वाधिक उपेक्षित हुई, वह थी शिक्षा। प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च - हर स्तर पर शिक्षा की ओर घोर दुर्लक्ष्य हुआ और यदि ध्यान दिया भी गया तो इस तरह कि अपनी गुरु-शिष्य परम्परा को, संस्कारी शिक्षा को छोड़कर प्रशिक्षण या Training पर ही सारा जोर लगा दिया गया।

आज भारत की, और विश्व की भी, सभी समस्याओं का कोई एक प्रभावी, दूरगामी निदान है तो वह है अपनी शिक्षा को पटरी पर लाना। शिक्षा को रोजगार और तोतारटन्त के दायरे से निकालकर चिन्तनपरक और अध्यात्ममूलक बनाना ताकि वह वास्तविक यथार्थ के साक्षात्कार का उपकरण बने। वह तथाकथित यथार्थ नहीं जो भौतिक रूप में हमारे चारों ओर विद्यमान है और नाशवान है वरन् वह जो चिरन्तन है - शाश्वत सिद्धान्तों के रूप में, उदात्त जीवन मूल्यों के रूप में, परम तत्व परमात्मा के रूप में।

वही शिक्षा हमको अपने जीवन का उद्देश्य समझाकर और उसकी प्राप्ति का मार्ग सुझाकर इस विश्वव्यापी कंठछेदी प्रतियोगिता से त्राण दिलाएगी और सभी के शान्ति और संतोषपूर्ण सह-अस्तित्व का मार्ग प्रशस्त करेगी।

इसी कारण युग-भारती का प्रयास यही है कि युग-भारती के उच्च शिक्षा प्राप्त, बुद्धि और भावना से सम्पन्न सदस्य अन्य किसी भी व्यवसाय को छोड़कर अध्यापन में आयें - इंजीनियरिंग कॉलेज में, मेडिकल कॉलेज में, विश्वविद्यालय में, और इन सबसे भी अधिक आवश्यक - माध्यमिक और प्राथमिक शिक्षा में। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि युग-भारती इस प्रयास में सफल हो।

सदस्य - संवाद

साधुवाद : श्री त्रिवेणी नारायण जायसवाल (द्वादश १९९०) ने एम.एससी. (जन्तु विज्ञान) में कानपुर विश्वविद्यालय का स्वर्ण पदक प्राप्त किया।

अपनों से

युग भारती के फालतू काम !

बन्धुवर,

युग-भारती ने प्रारम्भ से ही पठन पाठन, लेखन मनन, चिन्तन चर्चा पर सर्वाधिक जोर दिया है - बजाय पैसे के, बजाय आडम्बर के, बजाय यश, प्रतिष्ठा और प्रभाव के। इसीलिए युग-भारती के कार्यक्रमों में प्रारम्भ से ही धन-साधन जुटाने की अपेक्षा कहीं अधिक बल बैठकों पर दिया गया है जिनमें संस्था के विकास की योजनाएं तो बनें ही, परन्तु उससे भी अधिक महत्वपूर्ण - हर प्रकार के विषयों पर विशद चर्चा हो जिससे दिमाग पर सदियों से चढ़ी वैचारिक गुलामी की गर्द सफा हो और अपने-आपको, अपने परिवेश को, हर वस्तु और विचार को एक व्यापक भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखने की प्रवृत्ति और क्षमता विकसित हो।

कथा यज्ञ

और यह तो किसी जागरूक व्यक्ति को बताने की जरूरत नहीं कि आज के विश्वव्यापी विचारधारा-संघर्ष में, या किसी भी परिस्थिति में, अपनी बात को तर्कपूर्वक प्रस्तुत करना ही सामने वाले को प्रभावित करने की ओर पहला कदम है और सफलता की गारंटी है। प्रसिद्ध लेखक, चिंतक और पत्रकार माननीय भानुप्रताप शुक्ल जब कथा-यज्ञ की बात करते हैं तो उसमें छुपा संकेत भी यही है - अपनी बात को स्थान-स्थान पर भाँति-भाँति से कहना, दोहराव का खतरा उठाकर या अमौलिक और लकीर का फकीर ने की उपाधि पाकर भी अपनी संस्कृति, अपनी परम्परा की बात तब तक कहते रहना जब तक कि दिग् दिगन्त उससे आच्छादित न हो जाये। युग-भारती की बैठकें, चर्चाएं, युग-भारती द्वारा आयोजित कार्यक्रम जिनमें अनेक क्षेत्रों के कर्मयोगी आकर हमको त्याग और तपस्या की सीख देते हैं, युग-भारती द्वारा प्रकाशित पत्र-पत्रिकाएं, युग-भारती द्वारा किया गया पत्र-व्यवहार - ये सभी उसी कथा-यज्ञ के अंग हैं।

कैसेट से कागज पर

इसी संदर्भ में युग-भारती का विशेष आग्रह है कि हमको प्रेरणा देने वाले महानुभावों की वाणी से हमारा एक बार नहीं, अनेक बार, लगातार साक्षात्कार हो ताकि हमारा डगमगाता मन स्थिर रह कर देश-सेवा और समाज-सेवा के श्रेयस्कर मार्ग में रमा रहे। युग-भारती का सतत् प्रयास है कि वह वाणी कागज पर, टेप पर सुरक्षित रहे, हमारे लिए, आने वाली पीढ़ियों के लिए।

कहने और सुनने में तो यह सहज साध्य लगता है कि इन महापुरुषों के भाषण कैसेट से सुनकर लिख लिए जाएं, पर करने में यह कितना धैर्यसाध्य और श्रमसाध्य है ये वही जानते हैं जिन्होंने कभी इसको किया है। वही बता सकते हैं कि कैसे बार-बार Play, Pause, Rewind और Forward करके शब्द-शब्द लिखने में घंटों निकल जाते हैं और सुनने में छोटा सा लगने वाला आधे घंटे का भाषण कैसे पन्नों पर पन्ने रंगता चला जाता है।

फालतू काम ?

पर पिछले दिनों मेरे एक परिचित ने राय व्यक्त की कि यह फालतू काम है। इसके बाद शायद उन्होंने अपनी बात को उचित ठहराने के लिए तर्क दिया, 'इसमें बुद्धि की कोई जरूरत नहीं'! उनकी इस बात से मैं इतना भौचक्का रह गया कि उस समय कुछ बोल ही नहीं पाया। आम तौर पर इस तरह की बातें मुझ पर कोई असर नहीं डालतीं क्योंकि उनको कहने वाले स्व-घोषित Practical या व्यावहारिक लोग होते हैं जो हर चीज को पैसे और दुनियादारी के पैमाने पर नापते हैं।

लेकिन सामाजिक संस्थाओं में वर्षों से कार्यरत, साहित्यिक रुचि और क्षमता से सम्पन्न व्यक्ति यदि इस प्रकार की बात कहे तो मानना चाहिए कि कहीं कुछ गड़बड़ है और यह कि गंभीर अंतर्वेषण के बिना गाड़ी आगे नहीं बढ़ेगी। सबसे पहले तो यही तय कर लिये जाए कि ऐसे कार्य में बुद्धि की आवश्यकता है या नहीं। माननीय ठेंगड़ी जी व माननीय गोर्विदाचार्य जी के अंग्रेजी-संस्कृत के उद्धरणों से पगे भाषणों को सुनकर सही-सही लिख पाना यदि कोई बिना बुद्धि का कार्य माने तो उसकी बुद्धि पर तरस ही खाया जा सकता है।

बीसों सूत्रों से संपर्क साधकर आप किसी वरिष्ठ कार्यकर्ता को अपने यहाँ इसलिए बुलाते हैं कि वह प्रतिष्ठित विचारक हैं, हजारों रुपये स्वाहा कर कार्यक्रम का आयोजन करते हैं और फिर उस विचारक के कहे को कागज पर समेटने की बात आती है तो यह काम फालतू हो जाता है, क्या यह गले उतारते वाली बात है? इसका मतलब तो यही हुआ कि ऐसा मानने वालों के दिमाग में केवल उस व्यक्ति के नाम और प्रसिद्धि का महत्व है जिसका स्थान-स्थान पर हवाला दिया जा सके लेकिन इसका कोई महत्व नहीं कि उसके कहे को बार-बार सुना जाये, पढ़ा जाये, गुना जाये और अनुसरण किया जाये।

सवाल यह है कि ऐसे लोगों की दृष्टि में कौन से काम हैं जो फालतू नहीं हैं। खैर, ये तो वही बता सकते हैं, अपनी विकट बुद्धि और अनुभव के आधार पर। जहाँ तक युग-भारती का प्रश्न है, युग-भारती उपर्युक्त किसी भी काम को फालतू नहीं समझती। हाँ, आपका निर्णय आपके हाथ में है - यदि आप भी इन कामों को फालतू समझते हैं तो युग-भारती से दूर-दूर ही रहिए। नजदीक आये तो यही समझा जाएगा कि आप युग भारती के दृष्टिकोण से सहमत हैं और तुरन्त आपको ऐसे ही कामों में जोत दिया जाएगा।

आपका
नीरज कुमार
अध्यक्ष

सदस्य संवाद

बधाई ! श्री राजेश गर्ग (दशम, १९७५), पूर्व अध्यक्ष 'युग-भारती' को पुत्र - प्राप्ति।

युग-भारती का पंजीकरण सम्पन्न (संख्या - १२७२)

हमारी न्याय पालिका : भविष्य के शुभ संकेत

कैलाश जोशी

न्यायपालिका का विशिष्ट स्थान

भारतीय लोकतंत्र में न्यायपालिका का प्रमुख स्थान है। विधायिका या कार्यपालिका से इसकी महत्ता कम नहीं आँकी जा सकती। कल्याणकारी राज्य की स्थापना का जो सपना स्वतंत्रता सेनानियों के मन में था, उसके आधार पर जनता की सार्थक भागीदारी के लिए ही लोकतंत्र को अंगीकार किया गया था तथा शासन को भली प्रकार संविधान सम्मत ढंग से चलाने के लिए व जनता को किसी भी प्रकार के अन्याय से बचाने के लिए अधिकार सम्पन्न स्वतंत्र न्यायपालिका की भी व्यवस्था की गयी थी।

किन्तु विधायिका व कार्यपालिका के जिन सदस्यों को जनता ने अपना हितैषी समझ सदन में भेजा, उनमें से अधिकतर ने जनता द्वारा मिली इस जिम्मेदारी को शासन करने का अधिकार मान जैसा उच्छृंखल आचरण किया, उसका ही परिणाम है कि आज हम इस दुर्दशा को प्राप्त हुए हैं।

सरकार पर अंकुश

न्यायपालिका को प्राप्त उसकी यह विशेष शक्ति ही थी जिसने समय-समय पर सरकार की गलत नीतियों को निरस्त करते हुए आवश्यक दिशानिर्देश जारी किये, जिन्होंने उसे सामान्य नागरिक को न्याय दिलाने वाली संस्था के अतिरिक्त संविधान के रक्षक के रूप में भी प्रतिष्ठित किया। विधायिका द्वारा संविधान से छेड़छाड़ के संदर्भ में १९७३ के प्रसिद्ध केशवानन्द भारती विवाद में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि संसद संविधान के किसी भी भाग का संशोधन कर सकती है, लेकिन इससे संविधान की मूल धारणाओं (सिद्धान्तों) पर प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। आपात्काल के समय निरंकुश होती सरकार ने जब संविधान में ४२वाँ संशोधन कर संसद को असीमित अधिकार प्रदान कर दिये, तब सर्वोच्च न्यायालय ने ही संशोधन की उस धारा को रद्द करके सरकार के तानाशाही की ओर बढ़ते कदमों को रोकने का प्रयास किया था।

१९७५ में जब इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने इंदिरा गांधी के चुनाव को अवैध करार दिया तो उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय में अपील की। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने उस निर्णय को बरकरार रखा था। उस समय को प्रसिद्ध संविधानविज्ञ श्री एच.आर.सीखई ने सर्वोच्च न्यायालय का 'श्रेष्ठतम समय' कहा था। न्यायालय के इन साहसिक निर्णयों ने हमारी व्यवस्था की जड़ें मजबूत ही की थीं।

वर्तमान में यदि हम विविध विषयों पर न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों को देखें तो लगता है कि न्यायपालिका का वह 'श्रेष्ठ समय' फिर आ गया है, संभवतः कभी न जाने के लिए।

भ्रष्टाचार का प्रतिकार

आज भ्रष्टाचार सम्पूर्ण विश्व की समस्या बन चुका है। भारत भी इस विश्वव्यापी समस्या से जकड़ा जा चुका है। किसी भी देश के लिए इससे ज्यादा चिन्तनीय स्थिति क्या हो सकती है ऐकि अपने को देश का नीति निर्धारक कहने वाले भ्रष्टाचार में इस तरह आकंठ डूबे हों। जिस गाँव के कुँओं में ही भाँग पड़ी हो वहाँ के लोगों के लिए नशामुक्ति का नारा एक छलावा मात्र है। फिर ये तथाकथित नेता किस मुँह से आदर्श और सिद्धान्त की बात करेंगे ?

यह दशक यदि घोटालों का दशक कहा जाये तो अतिशयोक्ति न होगी। हाल ही में हवाला काण्ड ने सम्पूर्ण देश को झकझोर कर रख दिया है। यह घोटाला उच्चपदस्थ लोगों की जानकारी में १९९१ में ही आ गया था, किन्तु इसमें शामिल लोगों की ऊँची पहुँच के कारण कार्यवाही नहीं हो रही थी। वह तो भला हो सर्वोच्च न्यायालय का, जिसने इस सम्बन्ध में दायर जनहित याचिका के आधार पर केन्द्रीय जाँच ब्यूरो (सी.बी.आई.) को उसकी धीमी गति पर लताड़ने के साथ-साथ सरकार को भी निर्देशित किया।

'हवाला कांड' की जाँच प्रक्रिया पर शुरू से ही उँगली उठती रही है। सर्वोच्च न्यायालय भी शायद इससे अनजान नहीं था। इसी कारण कुछ दिन पूर्व सी.बी.आई. ने न्यायालय को आदेश दिया है कि वे जाँच कार्य की प्रगति की जानकारी किसी को नहीं (प्रधानमंत्री को भी नहीं) देंगे।

'हवाला काण्ड' के साथ-साथ बिहार का 'पशु चारा घोटाला' भी कम चर्चित नहीं है। बिहार सरकार इस पर जिस धीमी गति से कार्य कर रही थी, उससे क्षुब्ध होकर पटना उच्च न्यायालय ने सी.बी.आई. से इस मामले की जाँच कर चार महीने में रिपोर्ट पेश करने को कहा, साथ ही बिहार सरकार को इस कार्य में सहयोग देने के लिए निर्देशित किया। बिहार सरकार ने सर्वोच्च न्यायालय में अपील की। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में पटना उच्च न्यायालय के फैसले को उचित ठहराया, साथ ही इस जाँच को पटना उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की ही देखरेख में कराने का आदेश दिया।

और लगभग डेढ़ सौ वी.आई.पीज़ के साथ-साथ अरबों रुपये वाले इस घोटाले को निपटाने में सरकार ने अपनी राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विता पर ही सारा ध्यान लगा दिया। प्रधानमंत्री नियंत्रित सी.बी.आई. ने इस योजना को बखूबी अन्जाम दिया और नियंत्रण ऐसा कि मंत्रियों को पता चलता रहा कि उनके विरुद्ध कब आरोप पत्र दाखिल हो रहे हैं और उसी के अनुसार वे सुविधापूर्वक इस्तीफा देते रहे।

असहमति के अधिकार की रक्षा

किसी भी लोकतंत्र में विविध समस्याओं पर जन आन्दोलन तो होते ही रहते हैं। एक ओर जहाँ सत्तापक्ष द्वारा प्रायोजित आन्दोलनों में सरकारी सम्पत्ति का खुलकर दुरुपयोग होता है, वहीं दूसरी ओर अन्य संगठनों के आन्दोलनों का सरकारी मशीनरी द्वारा क्रूरतापूर्वक दमन करवाया जाता है। अयोध्या आन्दोलन में मुलायम सिंह सरकार द्वारा किया गया नरसंहार भला कौन भुला सकता है? इसी क्रम में दिल्ली में प्रदर्शन करने जा रहे उत्तराखण्ड के निहत्थे, असावधान आन्दोलनकारियों से मुलायम सिंह की ही सरकार द्वारा जैसा बर्बर व्यवहार किया गया, नारी के साथ जो खिलवाड़ किया गया, वह ब्रिटिश शासन काल से भी बदतर था। जनसामान्य की कड़ी प्रतिक्रिया से विविश होकर बनाये गये जाँच आयोग की महिला सदस्या तथा पूर्व मुख्यमंत्री मायावती ने जिस प्रकार महिलाओं पर हुए अत्याचारों को नकार दिया तथा दोषी अधिकारियों पर कार्यवाही करने से मना कर दिया, वह और भी दुखद था।

सभी आन्दोलन प्रारम्भ में शान्तिपूर्ण ही होते हैं। यदि उनका प्रारम्भ में ही सौहार्दपूर्वक समाधान कर दिया जाये तो वे पंजाब, कश्मीर, पूर्वोत्तर भारत जैसे विकट रूप तक कभी नहीं पहुँचेंगे। शायद यही बात इलाहाबाद उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों के मन में रही होगी जब उत्तराखंडियों के मामले में उन्होंने सरकार और प्रशासन को दोषी ठहराया। न्यायिक इतिहास में यह निर्णय अभूतपूर्व है। इस निर्णय ने उन अशान्त आन्दोलनकारियों को कुछ तो राहत प्रदान की ही है, साथ ही सरकार को भी भविष्य में इस तरह की घटनाओं से संयम से निपटने का संदेश दिया है। दोषी पाये गये अधिकारियों से ही हर्जाने की राशि वसूलने का न्यायालय का सुझाव सर्वथा उपयुक्त है सत्ता मदांध कुटिल राजनीतिकों के छोटे से इशारे पर अपनी क्रूरता के जौहर दिखाने को तत्पर प्रशासनिक अधिकारियों के अति उत्साह पर लगाम लगाने में यह उपाय अत्यंत प्रभावी होगा।

अन्य निर्णय

इसके अतिरिक्त भी न्यायालय के अन्य निर्णयों की एक लम्बी सूची है जिससे इस बात का अहसास होता है कि हमारी न्याय व्यवस्था राष्ट्रीय चरित्र के प्रति अत्यन्त जागरूक है।

आरक्षण के सम्बन्ध में 'क्रीमी लेयर' का सिद्धान्त देकर तथा किसी भी हालत में आरक्षण सीमा ५०% से अधिक न होने का आदेश देकर सर्वोच्च न्यायालय ने सामाजिक अन्याय के प्रति उचित न्याय किया है। श्री राम जन्म भूमि पर निर्मित अस्थायी मंदिर में पूजा-पाठ की अनुमति देना (अभी कुछ ही दिन पूर्व सर्वोच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीश ने पूजा-पाठ की व्यवस्था को और लचीला बनाये जाने पर जोर दिया है ताकि भक्तों को परेशानी न हो) न्यायपालिका द्वारा जनसामान्य की भावनाओं के सम्मान का द्योतक है।

मुख्य निर्वाचन अधिकारियों से संबंधित श्री शेषन की अपील पर दिये गये निर्णय ने लम्बे समय से चले आ रहे विवाद का अन्त किया है।

कश्मीर में चुनाव के मसले पर चुनाव आयोग व केन्द्र सरकार के मध्य मतभेदों को सुलझाने के लिए अपने अधिकार के प्रयोग का फैसला न्यायपालिका द्वारा लोकतंत्र में अपनी शीर्ष भूमिका की स्पष्ट स्वीकारोक्ति है।

राष्ट्रीय ध्वज के उपयोग पर केवल सरकारी तंत्र के अधिकार के संबंध में दायर याचिका पर अपने निर्णय में दिल्ली उच्च न्यायालय ने आम नागरिकों के लिए इसके प्रयोग पर लागू प्रतिबन्ध को गलत बताया है (हालांकि इस संदर्भ में केन्द्र सरकार ने सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दायर कर इस फैसले पर अस्थायी रोक लगवा दी है।

महिलाओं के संदर्भ में मामले की सुनवाई बन्द कमरे में ही करने के न्यायालय के निर्देश ने उन लाखों शोषित व पीड़ित महिलाओं की कानूनी लड़ाई में मदद की है जो न्यायालय में जाने से हिचकती थीं।

भविष्य ?

जो भी हो, न्यायपालिका के अधिकांश निर्णयों ने यह विश्वास जगाया है कि वह विधायिका व कार्यपालिका को देश के वर्तमान तथा भविष्य से खिलवाड़ न करने देगी।

न्यायपालिका को अभी और सशक्त होकर उभरना होगा। और यह असम्भव भी नहीं क्योंकि इस देश की जनता की सहानुभूति और शक्ति उसके साथ है। लेकिन इसके लिए न्यायपालिका को अतिरिक्त मेहनत करनी पड़ेगी। अधीनस्थ न्यायालयों में लगते मुकदमों के ढेर, बढ़ते भ्रष्टाचार व अकर्मण्यता के लिए भी सर्वोच्च न्यायालय को दिशा-निर्देश जारी करने होंगे।

साथ ही न्यायालयों को ऐसी कार्यप्रणाली अपनानी होगी कि राष्ट्र की एकता व अखण्डता से सम्बन्धित लंबित मुकदमों में शीघ्र निर्णय लिया जाये। न्यायपालिका को तर्क के साथ ही जनसामान्य के व्यापक मंगल का भी ध्यान रखना होगा। तार्किक आधार पर कई बातें पूर्णतः उचित हो सकती हैं किन्तु सामाजिक दुष्प्रभाव के आधार पर उन्हें त्यागना ही श्रेयस्कर होगा। जैसे शराब, सिगरेट, लॉटरी, घुड़दौड़ इत्यादि के संदर्भ में समाज पर पड़ने वाले दूरगामी कुप्रभाव को अनदेखा नहीं किया जा सकता।

कल्पनाथ राय द्वारा दायर की गयी जमानत की अर्जी निरस्त करते हुए न्यायमूर्ति ढींगरा का देश के नेताओं के बारे में कथन भारतीय राजनीति का कड़वा सच है किन्तु न्यायमूर्ति जी को यह विचार करना चाहिए था कि सभी नेता ऐसे नहीं हैं।

सारतः न्यायालय को वर्तमान में मिले सुअवसरों का देश के श्रेष्ठ भविष्य के लिए उपयोग करना चाहिए तथा अपनी शक्ति के दुरुपयोग से बचते भी रहना चाहिए। अन्यथा ऐसा न हो कि हम 'निरंकुश लोकतंत्र' से बचते-बचते 'निरंकुश न्यायतंत्र' में जा फँसें।

(अगले अंक में हिन्दुत्व पर दिये गये निर्णयों के बारे में)

शिक्षा का कल्पतरु सूख रहा है, क्या हम मूक दर्शक ही बने रहेंगे?

पुरानी नींव पर नया निर्माण

(दीनदयाल विद्यालय, कानपुर के रजत जयंती समारोह में आयोजित शिक्षा-संगोष्ठी में प्रस्तुत व्याख्यानों की श्रृंखला में गत अंक में आपने श्री ज्ञानेन्द्र कुमार वशिष्ठ का लेख पढ़ा। प्रस्तुत है अगली कड़ी)

जागेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव

आमुख

कल्पतरु तो कभी सूखता नहीं। हाँ, मात्र तरू सूखता है और हम देख रहे हैं कि शिक्षा (यदि वर्तमान शिक्षा को शिक्षा कहा जा सके तो) का तरु सूख रहा है। इस तरु को हम सींचेंगे, उर्वरक देंगे, उसकी सतत् देखभाल करेंगे और साग्रह कह रहे हैं कि नहीं, हम मात्र मूक दर्शक की भूमिका से परे हट कर तथा कर्मण्य साधक बन कर जो करणीय है, उसे करेंगे और परिस्थिति चाहे जितनी बिगड़ी हो, अपने वज्र-संकल्प एवं तदनुरूप कर्म-विधान द्वारा उसे हरा-भरा और फलदायी बनायेंगे।

सो आइए, पहले यह देख लें कि शिक्षा है क्या और इसके उद्देश्य छात्र, समाज और भारत राष्ट्र तथा समग्र मानवता के परिप्रेक्ष्य में क्या होने चाहिए? यदि ये बातें स्पष्ट हो गई और शिक्षा के विषय में लोग सचेतन बन गये तो विद्यालय से लेकर राष्ट्र का प्रत्येक घटक अपने दायित्व को स्वयं समझ लेगा और यदि उसे अनुकूल वातावरण मिल गया तो अपने दायित्व का निर्वाह करने की प्रेरणा से जीवमान बनकर करणीय सब कुछ करने की दिशा में अग्रसर होगा। इस वातावरण के निर्माण का दायित्व साझा, सार्वजनिक और सामाजिक है।

स्वरूप

श्री विवेकानन्द जी के मतानुसार 'शिक्षा मनुष्य के भीतर निहित पूर्णता का विकास है'। श्री अरविन्द जी का विचार है कि 'शिक्षा शिक्षार्थी की प्रकृति में जो सर्वोत्तम, सर्वाधिक शक्तिशाली, सर्वाधिक अन्तरंग और सजीव है, उसे अभिव्यक्त करा सकने की कला है।' मनुष्य की क्रिया और विकास जिस साँचे में ढलने चाहिए वह उसके अन्तरंग गुण और शक्ति का ढाँचा है। इस ढाँचे को ठीक-ठीक स्वरूप देना ही शिक्षा का काम है। जगद्गुरु शंकराचार्य का स्वर है - 'विभिन्न प्रवृत्ति प्रयोजकेष्ट साधनता ज्ञानाख्य शिक्षायाः प्रयत्नः शिक्षणं कथ्यते।'

अर्थात् किसी भी प्रकार की प्रवृत्ति में प्रयोजक तत्वों के इष्ट साधन, ज्ञान या प्रयत्न को शिक्षा, शिक्षण या प्रशिक्षण कहते हैं। यही शिक्षा अपने उच्चतर सोपान पर विद्या की संज्ञा धारण कर लेती है, जिसके विषय में अनेक सूक्तियाँ हैं - 'सा विद्या या विमुक्तये' अर्थात् विद्या मोक्ष प्रदान करने वाली है; 'विद्यया मृतमश्नुत' अर्थात् विद्या से मनुष्य अमृत प्राप्त करता है; 'विद्या ददाति विनयं' अर्थात् विद्या मनुष्य को विनयशील बनाती है; 'नास्ति विद्यासम चक्षुः' अर्थात् विद्या के समान कोई दृष्टि नहीं है, आदि आदि। इसी विद्या तक पहुँचाने वाली शिक्षा ही मानव का कल्याण कर सकती है। अतएव 'प्रवर्तनीया सा विद्या' - इसी विद्या का प्रवर्तन करना है।

उद्देश्य

शिक्षा के उद्देश्य अपने राष्ट्र के परिप्रेक्ष्य में यों प्रस्तुत किए जा सकते हैं -

१. छात्रों के व्यक्तित्व का शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास जो उनमें निहित शक्ति का अधिकतम उद्घाटन कर सके।

२. भारत के प्रति पूर्ण श्रद्धा भक्ति का विकास।

३. छात्रों को इस प्रकार भावना - समन्वित बनाना कि वे समग्र मानवता से प्रेम कर सकें और उसके संरक्षण में अपना योगदान सहर्ष प्रस्तुत करें।

४. उनमें ऐसे संस्कारों का विकास कि वे परमात्मा के प्रति श्रद्धा, विश्वास से पूर्ण, सच्चरित्र, सेवाभावी एवं तेजस्वी बन सकें।

५. उनमें ऐसी समझदारी का विकास कि वे आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक समानता एवं समरसता में विश्वासी बनें तथा भारत की मंगलकारिणी संस्कृति के रक्षक एवं वाहक बन सकें।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अनुकूल वातावरण का सृजन अनिवार्य शर्त है। विद्यालयों, परिवारों, गाँवों, नगरों, जनपदों एवं समूचे भारत में ऐसे वातावरण का सृजन करना होगा कि लोग भोगवादी, स्वार्थी, चरित्रहीन, द्वेषालु, घृणा करने वाले न बनकर पारस्परिक कल्याण के सृजक बने। एतदर्थ विद्यालयों को सर्वाधिक, क्योंकि नींव का काम यही विद्याकेन्द्र करते हैं, तथा अन्यान्य सभी संस्थाओं, उपसंस्थाओं को व्यवस्थित करना पड़ेगा। जिस समाज में स्वार्थपूर्ण आपाधापी, जातीय वैमनस्य, परस्वत्वापहरण आदि दूषणों का नंगनाच हो रहा हो, वहाँ विद्यार्थी, विद्यालय और विद्यादान करने वाले शिक्षक सम्पूर्ण करणीय के स्रष्टा नहीं बन सकेंगे। सभी प्रकार के उत्थान के लिए पूरकता और पारस्परिकता तो अनिवार्य शर्ते हैं। अब अलग-अलग विचार करें

(प्रथम पेज का शेष)

- सम्पूर्ण सृष्टि के साथ समरसता। उपयोगितावाद नहीं वरन् सह अस्तित्व के आधार पर प्रकृति का संरक्षण व संवर्धन।
- 'वादे वादे जायते तत्व बोधः' अर्थात् चर्चा के आधार पर सत्य के साक्षात्कार का प्रयास; वाद-विवाद खूब पर हठधर्मी नहीं; सबके प्रति विनम्रता और श्रेष्ठ के प्रति आदर।
- 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' अर्थात् सबका मंगल विधान; सभी प्राणियों का कल्याण ही सबसे बड़ा सत्य।

कोई भी पंथ यदि इन लक्षणों को छोड़ देता है तो बिखराव अवश्यंभावी है।

श्री गोपाल कृष्ण पाण्डेय ने स्पष्ट किया कि प्रकृति का सूक्ष्मतम तत्व 'अहंकार' ही 'अस्मिता की पहचान' के रूप में पंथ के प्रचलन या पंथ से जुड़ने को प्रोत्साहित करता है। भारतीय पंथों की सबसे बड़ी और मूल विशेषता है चिंतन की अनंतता का साक्षात्कार और उसको सहज स्वीकृति यदि मेरे पहले के और मेरे विचार ठीक हैं तो आगे भी ऐसा विचार आ सकता है जो ठीक हो; मैं जो कह रहा हूँ, वह अंतिम सत्य नहीं। इस प्रकार नवीन सिद्धान्तों के प्रतिपादन तथा निरन्तर सुधार की गुंजाइश बनी रहती है। परन्तु अभारतीय पंथों - प्रमुखतः इस्लाम और ईसाइयत - में इस प्रकार की वैचारिक उदारता का कोई स्थान नहीं। यदि भारतीय पंथ भी अनंत के इस बोध को छोड़ देते हैं तो धमासान तुरन्त प्रारम्भ हो जायेगा।

अगली बैठक में इसी विषय पर चर्चा जारी रहने की घोषणा करते हुए अध्यक्ष श्री ओमशंकर त्रिपाठी ने इस बात पर बल दिया कि प्रज्ञा भारती का दायित्व तर्क - वितर्क कर निष्कर्ष निकालना मात्र नहीं है वरन् यह भी है कि उन विचारों को जन सामान्य तक पहुँचाया जाये और उन पर कार्यान्वयन करते हुए समाज का बिखराव रोका जाये।

स्वत्वाधिकारी एवं प्रबंध सम्पादक राजेश कुमार गर्ग, सम्पादक सिद्धार्थ श्रीवास्तव, विजय कुमार गर्ग प्रकाशक एवं मुद्रक, द्वारा मुद्रित तथा ४८ एफ ब्लाक, पनकी कानपुर से प्रकाशित।
संस्थापक : स्व० श्री एम०के० गर्ग।

हिन्दुस्तान पेट्रोलियम

HP LUBE

HIGH PERFORMANCE LUBRICANTS
INDUSTRIAL OILS AND GREASES

लयूब डिपो संचालक

गर्ग गैस सर्विस

☎ 224093

123/361, फजलगंज, (गडरियनपुरवा) कानपुर - 12

PRODUCTS AVAILABLE WITH EXCISE (MODVAT) & TRADE TAX 2.5%

AUTOMOTIVE LUBRICANTS

- HYLUBE MILCY 30, 40, 50
- HDX MULTIGRADE 20 W - 40
- HYLUBE X - 310W, X-330, X - 340
- HP EXTRA SUPER M.O. 20 W - 40
- HYLUBE EXTRA 20 W - 40
- MILCY MULTIGRADE 20W - 40
- HYLUBE LL 15 W - 40
- HP SUPE 2T ENGINE OIL
- HP SUPER SYNTH 2T OIL
- HP GEAR OIL EP 90, EP 140
- HP GEAR OIL XP 90, XP 140
- HP AUTO MATIC TRANSMISSION FLUID
- HP KOOL GARD (COOLANT)
- HP SUPERDUTY BRAKE FLUID
- HP WHEEL BEARING GREASE
- HP CHASSIS GREASE
- HP MULTI PURPOSE GREASE

INDUSTRIAL LUBRICANTS

- TURBINE OILS (TURBINOL 32, 46, 68, 77)
- BEARING FILM OILS (HP 46, 68, 100, 150, 220)
- HYDRAULIC OILS (ENKLO 32, 46, 68)
- CIRCULATING OILS (ENKLO HLP 46, 68)
- HP POWER FLUID (LTP 100 & TH 46)
- COMPRESSOR OILS (SEETUL 32, 46, 68)
- MACHINERY OILS (YANTROL 32, 46, 68)
- MACHINERY OILS (YANTROL 32, 68, 100)
- SPINDLE OILS (SPINTEK 5, 12, 22)
- PNEUPIATIC TOOL OILS (NUMATIC -100)
- MACHINE TOOL OILS (WAYLUBE 68, 220)
- SUGAR MILL OILS (CRUSHWELL 2,4)
- GEAR OILS (PARTHANEP, HYTAK)
- QUENCHING OILS (METAQUENCH 39, 40, 42)
- CUTTING FLUIDS (KOOL KVT 40, 60)
- RUBBER OILS (ELAS TO 165, 245)
- RUST PREVENTIVES (RUSTOP 285, 387)
- HEAT TRANSFER OILS (HYTHERM 500, 600)

स्टाकिस्ट एवं फुटकर विक्रेता

गर्ग ऐजन्सीज (ल्यूब डिवीजन)

123/362 फजलगंज, कानपुर - 12 ★ फोन - 223076

CONTACT: Er. RAJESH KUMAR GARG [B.Tech Chemical Engg., — M. Tech. Plastic Tech.]